12

पर्व-तिथि में हरी सब्जी का त्याग क्यो ?

प्राचीन काल से जैन धर्म आहार-विहार व आचार-विचार की प्रणाली के लि सारे विश्व में प्रसिद्ध है । इसके प्रत्येक सिद्धांत व आहार-विहार आचार-विचार के प्रत्येक नियम पूर्णतः वैज्ञानिक हैं क्योंकि ये नियम को सामान्य व्यक्ति द्वारा स्थापित नहीं किये गये हैं किन्तु जैनधर्म के 24 तीर्थंकर श्री महावीरस्वामी ने उनको केवलज्ञान पूर्ण ज्ञान प्राप्त होने के बा अपने शिष्य परिवार, साधु-साध्वी व अनुयायी स्वरूप श्रावक-श्राविका औ इससे भी बढकर समग्र मानवजाति व संपूर्ण सजीवसृष्टि के परम कल्या के लिये बतायें हैं ।

जैन परंपरा में प्रचलित बहुत से नियमों में से एक नियम ऐसा है कि जैनधर्म का पालन करने वाले साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका को प्रति मा बारह पर्व-तिथि (दो द्वितीया, दो पंचमी, दो अष्टमी, दो एकादशी, दो चतुर्दशी व पूनम व अमावास्या) या पाँच पर्वतिथि (शुक्ल पंचमी, दो अष्ट व दो चतुर्दशी) और छह अठ्ठाई (कार्तिक माह, फाल्गुन माह, चैत्र मा आषाढ माह, व आसोज माह की शुक्ल सप्तमी से लेकर पूर्णिमा तक औ पर्युषणा के आठ दिन) को दौरान हरी सब्जी का त्याग करना चाहिये ।

हरी वनस्पति सजीव होने से पर्व-तिथि के दिन अपने लिये वनस्पति जीव व उसमें स्थित दूसरे जीवों की हिंसा न हो इस लिये पर्व-तिथि के दि हरी सब्जी का त्याग किया जाता है । सभी पर्व-तिथि में प्रत्ये श्रावक-श्राविका को हरी सब्जी का त्याग करना ही चाहिये ऐसा कोई आग्र नहीं है । अतः पर्व-तिथि की गिनती भी सापेक्ष है । अतः कोई श्राव श्राविका माह में पाँच पर्व-तिथि की आराधना करते हैं तो कोई बा पर्व-तिथि की आराधना करते हैं । संक्षेप में, पर्व-तिथि के दिनों में कम कम पाप व ज्यादा से ज्यादा आराधना करनी चाहिये यह इसका तात्पर्य ।

दूसरी बात प्रत्येक हरी सब्जी सजीव होती है । जबकि आटा, चावल दालें आदि सजीव नहीं होते हैं और गेंहूँ,जौ, मूँग, मोठ,चौला(बोडा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उदड, चना, तुवर (अरहर) इत्यादि धान्य सजीव भी हो सकते हैं और निर्जीव भी हो सकते हैं क्योंकि उनकी धान्य के रूप में निष्पत्ति होने के बाद निश्चित समय तक ही वे सजीव रहते हैं, बाद में वे अपने आप ही निर्जीव हो जाते हैं । इसके बारे में *प्रवचनसारोद्धार* नामक ग्रंथ के धान्यानामबीजत्वम् द्वार में बताया है कि गेहूँ, जौ, शालिधान, जुआर, बाजरा इत्यादि धान्य कोठी में अच्छी तरह बंद करके ऊपर गोमय आदि से सील किया जाय तो वे ज्यादा से ज्यादा तीन साल तक सजीव रहते हैं । बाद में वे अचित्त / निर्जीव हो जाते हैं ।

उसी तरह तिल, मूँग, मसूर, मटर, उदड, चौला, कुलत्थ, अरहर (तुवर) सेम इत्यादि पाँच वर्ष के बाद निर्जीव हो जाते हैं । जबकि अलसी, कपासिया, कंगु, कॉदों के दानें, सरसों इत्यादि धान्य ज्यादा से ज्यादा सात साल तक सजीव रह सकते हैं । बाद में वे अवश्य निर्जीव हो जाते हैं।

ऊपर बताया गया समय ज्यादा से ज्यादा है । जबकि कम से कम समय तो सिर्फ अन्तर्मुहूर्त अर्थात् दो घडी (48 मिनिट्स) ही है अर्थात् उसी धान्य के दाणे में जीव उत्पन्न होने के बाद सिर्फ 48 मिनिट्स के पहले भी वह निर्जीव हो सकते हैं ।

इस प्रकार अन्य धान्य भी निर्जीव हो सकते हैं । अतः हरी सब्जी का इस्तेमाल करने में जितना पाप लगता है इतना पाप उसका त्याग करने से लगता नहीं है । पर्व-तिथि में हरी सब्जी का त्याग करने का एक ओर तार्किक व शास्त्रीय कारण यह है कि हरी सब्जी का त्याग करने से मनुष्य को उसके प्रति आसक्ति पैदा नहीं होती है । सामान्यतः हरी सब्जी व फल में सुके दलहन (द्विदल) की अपेक्षा ज्यादा मधुरता होती है अतः मनुष्य को सुके दलहन (द्विदल) के बजाय हरी सब्जी व फल का आहार करना ज्यादा प्रिय लगता है । यदि वह हररोज किया जाय तो मनुष्य को उसके प्रति गहरी आसक्ति पैदा हो जाती है, परिणामतः उसको उसमें पैदा होना पड़ता है क्योंकि क्रमवाद का नियम है कि जहाँ आसक्ति वहाँ उत्पत्ति ।

वास्तव में जो लोग शाकाहारी है उनको हरीसब्जी लेने की आवश्यकता नहीं है किन्तु जो लोग मांसाहारी है उनको ही हरी सब्जी लेने की विशेष आवश्यकता है क्योंकि उनके खुराक में मनुष्य के शरीर के लिये आवश्यक क्षार, विटामीन, कार्बोहाईड्रेट्स नहीं होते हैं उसी कारण से उन सब को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कब्जियत हो जाती है । वैद्यों के अनुभव में यही बात स्पष्ट हुई है । जबकि शाकाहारी मनुष्य प्रति दिन हरी सब्जी लेते होने से उनको ऐसी तकलीफ कम होती है ।

दूसरी बात, हरी सब्जी में लोह तत्त्व अधिकतम होता है । जबकि प्राणिज द्रव्य में बिल्कुल होता ही नहीं है । शाकाहारी मनुष्यों के शरीर में वह ज्यादा होने से हरी सब्जी प्रति दिन लेने की कोई आवश्यकता नहीं है और वह दलहन में होता ही है ।

आयुर्वेद की दृष्टि से विचार करने पर हरी सब्जी पित्तवर्धक है, जबकि दलहन (द्विदल) वायुकारक है । अतः हरी सब्जी ज्यादा लेने पर पित्त हो जाता है, वह न हो और शरीर में वात, पित्त व कफ का संतुलन अच्छा हो इस लिये हर तीन दिन में एक दिन हरी सब्जी का त्याग करना चाहिये । इसी कारण से प्रति तीन दिन पर एक पर्व-तिथि आती है और पक्ष के अन्त में चतुर्दशी-पूर्णिमा या चतुर्दशी-अमावास्या स्वरूप दो दो पर्व-तिथि संयुक्त आती है । इसका कारण यही है कि यदि सारे पक्ष में पित्त ज्यादा हो गया हो तो उसका संतुलन दो दिन हरी सब्जी का त्याग करने से हो पाता है ।

कार्तिक माह, फाल्गुन माह, चैत्र माह, आषाढ माह व आसोज माह की सुद सप्तमी से लेकर पूर्णिमा तक के दिनों को अठ्ठाई कही जाती है । वस्तुतः यही समय ऋतुओं का सन्धिकाल है । इसी समय में शरीर में वात, पित्त व कफ की विषमता के कारण स्वास्थ्यहानि होती है । उसमें ज्यादा खराबा न हो इस लिये आयंबिल के तप द्वारा कफ व पित्त करने वाले पदार्थों का त्याग करना चाहिये । आयुर्वेद में कहा है कि *"वैद्यानां शारदी माता, पिता तु कुसुमाकरः"* वैद्यराजों के लिये शरद ऋतु माता समान और वसंत ऋतु पिता समान है क्योंकि इन ऋतुओं में ही लोगों का स्वास्थ्य बिगडता है और इससे डॉक्टर व वैद्यों को अच्छी आमदनी होती है ।

इस प्रकार धार्मिक, वैज्ञानिक, स्वास्थ्य व आयुर्वेद की दृष्टि से शाकाहारी हम सब को पर्व-तिथि के दिनों में हरी सब्जी का त्याग करना चाहिये ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org